हिन्दी साहित्य का इतिहास

प्रश्न- हिन्दी साहित्येतिहास के पुनर्लेखन की समस्याएं क्या हैं, प्रकाश डालें?

उत्तर→ किसी भी भाषा का साहित्य उस देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक शक्ति का प्रतिबिम्ब होता है तथा किसी भी भाषा के साहित्य का इतिहास लिखने में आरम्भ में इतिहास लेखक के समक्ष अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं। ये कठिनाइयाँ जहाँ एक ओर इतिहास लेखक को विचलित करती हैं, वहीं किसी सर्वस्वीकृत अथवा मान्य सिद्धान्त के अभाव में उसके सृजन का पथ भी बदलती हैं। जिन साधनों, संसाधनों अथवा स्रोतों के माध्यम से इतिहास लेखक को जो सामग्री प्राप्त होती है, उसकी प्रामाणिकता का परीक्षण और फिर उसके पुनर्नियोजना की समस्या अत्यन्त जटिल होती है।

अन्य भाषाओं के साहित्येतिहास लेखकों की भाँति हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों के सामने भी अनेक समस्याएं उपस्थित रही हैं।

सामान्य रूप से हिन्दी भाषा के इतिहास लेखक को हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रारम्भ की तिथि की समस्या, काल विभाजन की समस्या, कालों के नामकरण की समस्या, साहित्यकारों के चयन की समस्या, हिन्दी साहित्य के इतिहास में अन्य भाषाओं के साहित्य के समावेश की समस्या, मूल्यांकन की समस्या, कवि जीवन निर्धारण विषयक समस्या आदि समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

इन समस्याओं का सामना करते हुए अब तक जितने भी इतिहास ग्रंथ लिखे गये हैं उनके सम्बन्ध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है।

इसलिए सभी विद्वान इन ग्रन्थों के पुनर्लेखन की आवश्यकता अनुभव करते हैं।

इन्हीं समस्याओं को ध्यान में रखते हुए हिन्दी भाषा के इतिहास लेखन और पुनर्लेखन की प्रमुख समस्याओं को निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत समझा जा सकता है।—

1. हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रारम्भिक तिथि की समस्या:—

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण और आधारभूत समस्या यह है कि हिन्दी भाषा और साहित्य का आरम्भ कब से माना जाय और उसके प्रारम्भिक स्वरूप का निर्धारण किस प्रकार किया जाए?

इस विषय पर विचार करने से यह समस्या आती है कि हिन्दी का पहला कवि किसे माना जाए और उसकी रचना को हिन्दी की किस पूर्वज भाषा के अन्तर्गत माना जाये जहाँ से हिन्दी के द्वार खुलते हैं हिन्दी के समारम्भ के प्रश्न के साथ काल-निर्धारण का प्रश्न स्वयं ही उपस्थित हो जाता है, क्योंकि जिस कवि की रचना को हिन्दी की हम प्रथम रचना मानेंगे, वहीं से हिन्दी के आदिकाल का आरम्भ मानना होगा। हिन्दी की पाँच उपभाषाएं एवं अवहट्ट बोलियाँ मानी गयी हैं, किन्तु हिन्दी साहित्य के इतिहास में इन सबको स्थान नहीं मिल सका है, भाषा के स्तर पर हिन्दी विभिन्न बोलियों के एक समूह के रूप में सामने आती है जबकि हिन्दी साहित्य के इतिहास में विशेष रूप से तीन ही बोलियाँ अवधी, ब्रज व खड़ी

बोली को स्थान मिल सका है, मैथिली, भोजपुरी, राजस्थानी आदि में रचित साहित्य को अभी तक हिन्दी साहित्य में उचित स्थान नहीं मिल सका है, उदाहरण के लिए यदि मैथिली भाषा पर ही विचार करें, तो ज्ञात होगा कि विद्यापति को छोड़कर इस भाषा के अन्य साहित्यकार अन्धकार के गर्त में पड़े हुए हैं, नवीन इतिहास के पुनर्लेखन के समय इन समस्याओं पर विचार और उनके सर्वमान्य समाधान की आवश्यकता है,

२. काल विभाजन एवं नामकरण की समस्या :- हिन्दी साहित्य के सृजनारम्भ की समय-सीमा निर्धारित होने के बाद हिन्दी के काल-विभाजन और कालों के नामकरण की समस्या सामने आती है। हिन्दी का जो काल-वीरगाथा काल कहा गया है उसे आचार्य शुक्ल ने संवत 1050 से 1375 वि० तक माना है, अन्य विद्वानों ने इसे सातवीं, आठवीं शताब्दी से प्रारम्भ माना है और नामकरण भी अपने मतानुसार किया है। सिद्धसामंतकाल आदिकाल, बीजवपनकाल, चारणकाल व वीरगाथाकाल आदि कई नाम इसके लिए प्रचलित हैं। इन सभी नामों की पृष्ठभूमि में विद्वानों द्वारा निर्धारित कालावधि में रचे ~~जा~~ गये ग्रन्थों की विषय-वस्तु तथा प्रवृत्तियों को आधार बनाया गया है, कहने का अर्थ यह है कि कालों के नामकरण और उसकी अवधि को निर्धारित करने के लिए हिन्दी इतिहासकार के ~~सम्मुख~~ समक्ष कोई मानक आधार नहीं है, हिन्दी साहित्य का इतिहास भविष्य में जब भी पुनर्लिखित हो इस विवाद को सदा के लिए समाप्त किया जाना आवश्यक है। हमें अपने समस्त पूर्वाग्रहों एवं दुराग्रहों को त्यागकर

सर्वप्रथम पूरी ईमानदारी से आदिकाल की प्रारम्भिक सीमा का निर्धारण करना होगा, इसके प्रामाणिक ग्रन्थों की सूची बनानी होगी, प्रमुख प्रवृत्ति का निर्धारण करना होगा और तत्पश्चात् इसका नामकरण करना होगा।

3. साहित्यकारों के चयन और उनके जीवनवृत्त की समस्या :-

कालनिर्धारण के पश्चात् प्रत्येक काल की समय सीमा के अन्तर्गत जितने साहित्यकार आते हैं उनके चयन का क्या आधार हो? यह इतिहासकार के समक्ष एक अत्यन्त कठिन समस्या है। प्रत्येक युग में साहित्यकारों की संख्या बहुत अधिक होती है, सबको साहित्य के इतिहास में स्थान दिया जाना सम्भव नहीं है। ऐसी स्थिति में चयन अनिवार्य है, परन्तु इस चयन का आधार निर्धारित करना आवश्यक है।

कवियों का चयन कर लेने के बाद उनके प्रामाणिक जीवन-वृत्त और कृतित्व को संचित और विवेचित करने की समस्या उत्पन्न होती है। इस समस्या के साथ ही साहित्य विवेचन के समीक्षात्मक सिद्धान्तों की बात भी स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होती है। तात्पर्य यह है कि साहित्यकारों के कृतित्व को मापने का पैमाना क्या हो? इसकी सुनिश्चितता भी यथासम्भव होनी चाहिए।

साहित्य का इतिहास 'साहित्यालोचन' नहीं है। उसमें कवियों की प्रवृत्तियों का विश्लेषण तत्कालीन प्रवृत्तियों के संदर्भ में ही किया जाना उचित होता है। प्रत्येक काल की प्रवृत्तियों के निर्माण में तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों की विशेष भूमिका होती है। अतः इन कारण

मूल परिस्थितियों को देना भी अनिवार्य है।

प्रवृत्ति विवेचन के लिए उस काल के प्रमुख कवियों एवं कृतियों को ही आधार बनाना उचित है।

4. भक्तिकालीन सम्प्रदायों की समस्या :

भक्तिकाल के काव्य के मूल में उस समय की उच्चकोटि की दार्शनिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि का सहयोग रहा है, इसलिए इस काल को हिन्दी साहित्य का स्वर्णकाल कहा जाता है। इस दार्शनिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि का उद्भव जिन सम्प्रदायों के सहयोग से हुआ, वे आज भी साहित्येतिहास में उपेक्षित हैं, चाहे वे रामभक्ति से सम्बन्धित हो या कृष्णभक्ति से। जैसा कि कृष्णभक्ति काव्य से सम्बन्धित वल्लभ सम्प्रदाय, निम्बार्क सम्प्रदाय, चैतन्य सम्प्रदाय, सखी सम्प्रदाय एवं राधावल्लभी सम्प्रदाय। कृष्णभक्ति काव्य का श्रेय इन्हीं सम्प्रदायों को है। इसी भाँति निर्गुणकाव्य से जुड़े सम्प्रदायों की भी समस्या है, जिन्होंने निर्गुण काव्य की दार्शनिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि को प्रभावित किया और निर्गुण काव्य के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। साहित्य के इतिहास में इन सबका बहुत ही संक्षिप्त और विवादास्पद विवरण प्राप्त होता है अतः इन पर गंभीर शोध होना चाहिए और इनके व्यापक स्वरूप तथा कार्यक्षेत्र को खोजकर प्रकाश में लाया जाना चाहिए। इसके पश्चात इन्हें साहित्य के इतिहास में वांछित स्थान दिया जाना चाहिए।

5. प्रक्षिप्त अंशों से सम्बन्धित समस्या :

हिन्दी साहित्य के इतिहास के पुनर्लेखन में विशेष रूप से आदिकालीन और मध्यकालीन रचनाओं के

संदर्भ में प्रक्षिप्त अंशों की समस्या एक विकराल समस्या है। जैन और अपभ्रंश काव्यों के साथ वीरगाथा काल के रासो ग्रंथ तथा भक्तिकाल के निर्गुण सन्तों की रचनाएँ, जायसी का पद्मावत और सगुणभक्ति के भी कई ग्रन्थों में पर्याप्त प्रक्षिप्त अंश मिला हुआ है। चन्दवरदाई कृत पृथ्वीराजरासो तथा जायसी कृत पद्मावत को लेकर विद्वान बराबर वाद-विवाद करते रहे हैं, फिर भी वे आज तक किसी सर्वमान्य निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके हैं, इन ग्रन्थों के अनेक स्थल विवादों से घिरे हुए हैं, जिनके प्रामाणिक पाठालोचन की समस्या अत्यन्त जटिल रूप में हिन्दी जगत के समक्ष है। इस समस्या का समाधान भी बहुत-कुछ व्यापक शोध पर निर्भर है, क्योंकि इतिहासकार इस समस्या को अकेले नहीं सुलझा सकता है, अभी तक यह ठीक-ठीक नहीं बताया जा सकता है कि 'रासो' के कितने 'समय' (सर्ग) प्रामाणिक हैं और इनकी प्रामाणिकता का आधार क्या है?

6. विभिन्न शोध-ग्रन्थों के उचित उपयोग की समस्या:- हिन्दी साहित्य के इतिहास के पुनर्लेखन की एक समस्या शोध-कार्यों से प्राप्त निष्कर्षों के समावेश की समस्या भी है। इस सम्बन्ध में मिश्र बन्धुओं द्वारा प्रारम्भ की गयी परम्परा को फिर से पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है। हस्तलिखित ग्रन्थों को भी इतिहास में स्थान मिलना चाहिए। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में लिखा है, "सहस्रों हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकें देश के अनेक भागों में, राज पुस्तकालयों में तथा लोगों के घरों में अज्ञात पड़ी हैं" प्रतिवर्ष विश्वविद्यालय में अनेक शोधकार्य सम्पन्न

होते हैं किन्तु इनके निष्कर्षों का लाभ लेखक नहीं उठा पाते।

साथ ही लोक-साहित्य को भी हिन्दी साहित्य में स्थान दिया जाना चाहिए। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस क्षेत्र में पर्याप्त कार्य हुए हैं और बहुत-सी प्रकाशित-अप्रकाशित सामग्री सामने आ चुकी है, साहित्येतिहास का लेखन करते समय इस सामग्री को स्थान देना चाहिए। हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं में अब तक बहुत बड़ी संख्या में शोधकार्य हो चुका है। यह कार्य अलग-अलग दिशाओं में हुआ है। अभी तक हिन्दी साहित्य में बहुत-सा शोधकार्य अप्रकाशित है। जब तक वह प्रकाशित नहीं होता, हिन्दी जगत उससे अनभिज्ञ ही रहेगा और कालान्तर में वह शोध भी काल-कवलित हो जाएगा। आज तक जो भी शोध-कार्य हुआ है उसके पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता है। तत्पश्चात् इनके विशिष्ट बिन्दुओं को हिन्दी साहित्य के इतिहास में सम्यक् स्थान देने की आवश्यकता है। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। अतः इतिहास के पुनर्लेखन के समय इस पर पूर्णतया ध्यान देना चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इन समस्याओं को देखते हुए हिन्दी साहित्य के इतिहास के पुनर्लेखन की आवश्यकता है। यदि इन समस्याओं का समाधान हो जाता है तो हिन्दी साहित्य शीघ्र ही प्रौढ़ हो सकेगा और अन्य साहित्येतिहासों की भाँति गरिमामय स्थिति प्राप्त कर सकेगा।

अभ्यासार्थ प्रश्नावली

1 प्रश्न- साहित्य के इतिहास के पुनर्लेखन में लेखक

को किन समस्याओं से जूझना पड़ता है और क्यों ? सटीक एवं सतर्क उत्तर दें ?

२. प्रश्न- हिन्दी साहित्येतिहास- लेखन से जुड़ी हुई समस्याओं पर प्रकाश डालें ?

३. प्रश्न- उन समस्याओं का क्रमबद्ध विवरण प्रस्तुत करें जो हिन्दी साहित्य के इतिहास- लेखन के समय किसी लेखक के सामने आती हैं।

४. प्रश्न- हिन्दी साहित्येतिहास के पुनर्लेखन की समस्याएँ विषय पर एक सारगर्भित निबन्ध प्रस्तुत करें।

पता
डॉ० समदर्शी कुमार
विभाग- हिन्दी (S.R.A.P.C) (B.R.A.B.U.M)
मो०न० - 7909046087
दिनांक - 02.02.2023